॥श्रीश्रीगुरु-गौराङ्गौ जयतः॥

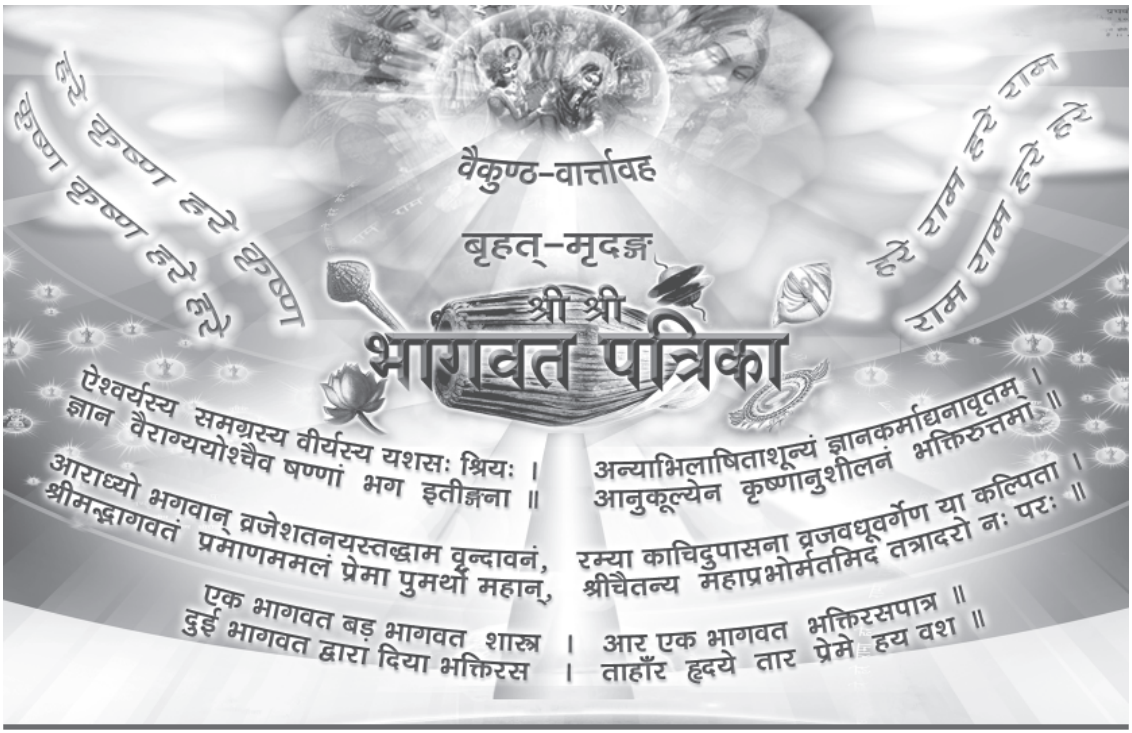

वर्ष ७} श्रीगौराब्द ५२४, केशव मास {संख्या ९

वि. सं. २०६७, मार्गशीर्ष मास; सन् २०१०, २२ नवम्बर—२१ दिसम्बर

श्रीमद्भागवतीय श्रीकृष्णस्तोत्राणि

श्रीकुन्तीदेवी कृतं श्रीकृष्णस्तोत्रम्

[श्रीमद्भागवतम् १/८/१८-४३]

नमस्ये पुरुषं त्वाद्यमीश्वरं प्रकृतेः परम्।
अलक्ष्यं सर्वभूतानां अन्तर्बहिरवस्थितम्॥ १॥

जब श्रीकृष्ण द्वारका जानेके लिए तैयार हुए, तब ब्रह्मास्त्रके तेजसे मुक्त अपने पुत्रों और द्रोपदीके साथ परम साध्वी श्रीकुन्तीदेवी उनका इस प्रकारसे स्तव करने लगीं—

हे कृष्ण! तुम उम्रमें छोटे दीखनेपर भी साक्षात् आदि पुरुष हो। क्योंकि तुम मायातीत तत्त्व और मायाके नियन्ता हो। अतएव तुम सभी प्राणियोंके भीतर और बाहर पूर्णरूपसे अवस्थित हो। किन्तु फिर भी तुम जीवोंकी जड़ेन्द्रियोंसे अतीत वस्तु हो। ऐसे तुम्हें मैं नमस्कार करती हूँ॥ १॥

मायाजवनिकाच्छन्नमज्ञाधोक्षजमव्ययम् ।
न लक्ष्यसे मूढदृशा नटो नाट्यधरो यथा॥ २॥

हे वासुदेव! तुम मायारूपी परदेके पीछे आड़द्वारा आच्छादित हो, तुम जीवोंके जड़ेन्द्रियगम्य ज्ञानसे अतीत तथा अपरिच्छिन्न हो। तुम अच्युत और नित्य वर्तमान हो। अतएव भक्तिसे रहिता स्त्री होनेके कारण मैं केवल तुम्हें नमस्कार करती हूँ। जिस प्रकार गान-नृत्य-ताल आदिसे अत्यन्त आकर्षक अभिनय करनेवाले व्यक्तिको मुग्ध दर्शक पहचान नहीं पाता, उसी प्रकार तुम देहाभिमानी व्यक्तिके दृष्टिगोचर नहीं होते॥ २॥

तथा परमहंसानां मुनीनाममलात्मनाम्।
भक्तियोगविधानार्थं कथं पश्येम हि स्त्रियः॥ ३॥

आत्मा तथा अनात्माका विवेक रखनेवाले मननशील और विषयरागसे निवृत्त योगीपुरुष लोग भी तुम्हारी अतुल महिमा और प्रभावके कारण तुम्हें दृष्टिगोचर नहीं कर पाते है। अतएव अपने प्रति भक्ति करानेके लिए इस जगतमें अवतीर्ण तुम्हें हम जैसी स्त्रियाँ किस प्रकारसे दर्शन करनेमें समर्थ हो सकती हैं?॥ ३॥

कृष्णाय वासुदेवाय देवकीनन्दनाय च।
नन्दगोपकुमाराय गोविन्दाय नमो नमः॥ ४॥

हे कृष्ण! सभी अवतारोंकी अपेक्षा तुम्हीं अत्यन्त सर्वश्रेष्ठ हो। इस अवतारमें तुमने अपने सम्पर्कसे बहुतोंकी प्रीति बढ़ायी है और उन्हें कृतार्थ किया है। मेरे भाई वसुदेव अति धन्य हैं, क्योंकि तुमने उन्हें पिताके रूपमें ग्रहण किया है। अतएव तुम वासुदेव हो। पिता वसुदेवकी अपेक्षा अधिकतर स्नेहवत्सला तथा धन्या माता देवकीके गर्भमें जन्म ग्रहणकर उन्हें अत्यन्त धन्या और समृद्धिशालिनी बना दिया है। अतएव तुम देवकीनन्दन कहलाते हो। इनकी अपेक्षा अत्यन्त मधुर स्नेहयुक्त गोपराज श्रीनन्द महाराज धन्य हैं, क्योंकि तुम्हारी कौमारलीलाका माधुर्य उन्होंने पूर्णरूपसे आस्वादन किया है। इसीलिए तुम नन्दराजकुमार कहलाते हो। नन्दमहाराजकी अपेक्षा अत्यन्त प्रीतिमती यशोदाजी धन्या हैं। अतएव तुम यशोदानन्दन हो। तुम्हारी कौमारलीलाकी अपेक्षा तुम्हारी ब्रजकी कैशोरलीला अत्यन्त श्रेष्ठ है, क्योंकि तुम्हारी कैशोरलीलामें तुम सभीकी सभी इन्द्रियोंको अपनी ओर आकर्षितकर अपार आनन्दका उपभोग करते हो और कराते हो। अतएव तुम गोविन्द हो। ऐसे तुम्हें बारम्बार नमस्कार करती हूँ॥ ४॥

नमः पङ्कजनाभाय नमः पङ्कजमालिने।
नमः पङ्कजनेत्राय नमस्ते पङ्कजाङ्घ्रये॥५॥

तुम मेरे नेत्र आदि इन्द्रियोंको आनन्द प्रदान करते हो। तुम्हारा नाभिदेश सुन्दर कमल जैसा है। तुम्हारे गलेमें सुन्दर कमलकी माला सुशोभित हो रही है। तुम्हारे दोनों नयन कमलकी तरह अत्यन्त प्रसन्न और खिले हुए हैं। तुम्हारे सारे अङ्ग कमल जैसे हैं। ऐसे तुम्हें मैं बारम्बार नमस्कार करती हूँ॥५॥

यथा हृषीकेश खलेन देवकी कंसेन रुद्धातिचिरं शुचार्पिता।
विमोचिताहञ्च सहात्मजा विभो त्वयैव नाथेन मुहुर्विपद्गणात्॥६॥

हे सुन्दर केशोंवाले! इन्द्रियोंके स्वामी! तुम्हारी माता देवकी, जिसे क्रूरमति कंसने बहुत कालतक कारागारमें बन्द रखा था, शोकसे अत्यन्त व्याकुल हो गयी थी। तुमने कारागारसे उन्हें मुक्तकर उनका शोक दूर किया। हे सर्वव्यापी विष्णो! उसी प्रकार तुमने मेरे पुत्र पाण्डवोंके साथ मुझे भी एक रक्षक या पालकके रूपमें असंख्य विपत्तियोंसे बारम्बार मुक्त किया है॥६॥

विषान्महाग्नेः पुरुषाददर्शनादसत् सभाया वनवासकृच्छ्रतः।
मृधे मृधेऽनेकमहारथास्त्रतो द्रोण्यस्त्रतश्चास्म हरेऽभिरक्षिताः॥७॥

हे श्रीहरि! तुमने हमें विषमिश्रित मोदकके द्वारा संभावित मृत्युसे, लाक्षागृहके दाहसे, हिडिम्बादि राक्षसोंके नेत्रपथसे, द्युतस्थान एवं वनवासरूप कष्टसे, प्रत्येक युद्धमें ही भीष्म, द्रोण, कर्ण आदि बहुतसे महारथियोंके प्राणघातक अस्त्रसमूहोंसे और इस समय अश्वत्थामाके इस ब्रह्मास्त्रसे हमारी सब प्रकारसे रक्षा की है॥७॥

विपद सन्तु नः शश्वत्तत्र तत्र जगद्गुरो।
भवतो दर्शनं यत् स्यादपुनर्भवदर्शनम्॥८॥

हे विश्वपति श्रीकृष्ण! जिन सभी विपत्तियोंके घटित होनेपर हमारे परम सौभाग्यके कारण पुनर्जन्मको नाश करनेवाले अर्थात् मोक्षदायक तुम्हारे दुर्लभ दर्शन प्राप्त होते हैं, हमारे लिए वे सभी विपत्तियाँ पूर्वोक्त सभी दशाओंमें चिर दिनके लिए उपस्थित हों। हे जगद्गुरु श्रीकृष्ण! आपसे यही मेरी प्रार्थना है॥८॥

जन्मैश्वर्यश्रुतश्रीभिरेधमानमदः पुमान्।
नैवार्हत्यभिधातुं वै त्वामकिञ्चनगोचरम्॥९॥

हे कृष्ण! सत्कुल, विद्या, धन और रूप आदि ईन्धनको प्राप्तकर जिनकी अहङ्काररूपी अग्नि अत्यन्त बढ़ गयी है, ऐसे व्यक्ति तुम्हारे निष्काम तथा निरभिमान भक्तोंके द्वारा बारम्बार प्रेमपूर्वक कीर्तित श्रीकृष्ण, गोविन्द इत्यादि शुद्धनाम कीर्तन करनेमें कदापि समर्थ नहीं होते, क्योंकि तुम केवल अकिञ्चन व्यक्तियोंके गोचरीभूत होते हो॥९॥ **(क्रमशः)**

रुचि

ॐ विष्णुपाद श्रील भक्तिविनोद ठाकुर

प्र. १—रागात्मिका सेवामें लोभ उदयका फल क्या है?

उ.—"कृष्ण-सेवा, वैष्णव-सेवा तथा नामकी आलोचनामें लोभ जन्मानेपर अन्य किसी वस्तुके प्रति लोभ नहीं रह सकता। ब्रजवासियोंकी कृष्णसेवा देखकर जिस सौभाग्यवान व्यक्तिका उसके प्रति लोभ उत्पन्न हो जाता है, वे उसी लोभकी कृपासे रागात्मिका भक्तिमें अधिकार प्राप्त करते हैं। जिस परिमाणमें रागात्मिका-सेवामें लोभ होता है, उसी परिमाणमें अन्यान्य वस्तुओंके प्रति लोभ नष्ट होता है।"

('लौल्य', सज्जनतोषणी १०/११)

प्र. २—रुचि किसे कहते हैं? आत्मवृत्तिकी स्वाभाविकी रुचिके व्यतिक्रमकी चेष्टाका फल क्या है?

उ.—"प्राचीन तथा आधुनिक संस्काररूप दोनों प्रकारकी सुकृतियोंको दबाने वाली प्रवृत्तिको ही 'रुचि' कहते हैं। जीवात्माकी यह रुचि नैसर्गिक है। जिनकी शृङ्गाररसमें रुचि नहीं है, दास्य या सख्यरसमें है, उन्हें उसी रसके सम्बन्धमें उपदेश प्रदान करना चाहिए, अन्यथा अनर्थ ही होगा। महात्मा श्यामानन्दकी सिद्ध स्वरुचि पहले ज्ञात नहीं थी, इसीलिए उन्हें सख्यरसमें प्रवेश कराया गया था; परन्तु बादमें श्रीजीव गोस्वामीकी कृपासे उन्हें उनकी रुचिके अनुसार सेवा प्राप्त हुई थी—यह लोक प्रसिद्ध है। श्रीकृष्णचैतन्यावतार में योग्यता तथा अधिकारका विचार ही प्रबल है।"

('भजन प्रणाली', हरिनामचिन्तामणि)

प्र. ३—किसकी सद्धर्म-प्रवर्तक रुचि उत्पन्न होती है?

उ.—"जिसका हृदय निर्गुण है, उसीकी ब्रजजनोंके आनुगत्यमें रुचि उत्पन्न होती है। अतएव रागानुगा-भक्तिमें लोभ या रुचि ही एकमात्र सद्धर्म-प्रवर्तक है।"

(जैवधर्म, २१वाँ अध्याय)

प्र. ४—क्या शुद्धभक्तिमें रुचि उत्पन्न होनेपर कृष्णके अतिरिक्त अन्यान्य विषयोंमें अरुचि हो जाती है?

उ.—

"गृह, द्रव्य, शिष्य, पशु धान्य-आदि धन।
स्त्री-पुत्र दास-दासी, कुटुम्ब जन॥
काव्य अलङ्कार आदि सुन्दरी कविता।
पार्थिव-विषय मध्ये ए सब वारता॥
एइ सब पाइवार आशा नाहि करि।
शुद्धभक्ति देह मोरे कृष्ण कृपा करि॥

अर्थात् घर, द्रव्य, शिष्य, पशु, अनाज आदि धन, स्त्री-पुत्र, दास-दासी, कुटुम्बी-जन, काव्य, अलङ्कार आदि सुन्दर कविता अर्थात् पाण्डित्य आदि पार्थिव विषयके अन्तर्गत आते हैं। हे कृष्ण! मैं ये सब वस्तुएँ प्राप्त करनेकी आशा नहीं करता। आप तो कृपा करके मुझे शुद्धभक्ति ही प्रदान कीजिए।"

(भजन-रहस्य 'रुचिभजन' ४/१)

प्र. ५—नाममें रुचि उत्पन्न होनेपर क्या प्रतिष्ठा आदिमें रुचि रहती है?

उ. —

"बहुशिष्य-लोभेते अयोग्य शिष्य करे।
भक्तिशून्य शास्त्राभ्यासे तर्क करि मरे॥
व्याख्यावादे बह्वारम्भे वृथा काल जाय।
नामे जार रुचि, सेइ ए सब ना चाय॥

अर्थात् जिसकी नाममें रुचि नहीं हुई है, वह बहुत शिष्य करनेके लोभसे अयोग्य व्यक्तियोंको भी शिष्य बना लेता है तथा भक्तिरहित शास्त्रोंका अभ्यास करते समय व्यर्थ तर्क करते-करते ही मर जाता है। अत्यधिक व्याख्या तथा बहुत आडम्बरोंके चक्करमें समय व्यर्थ चला जाता है। जिसकी नाममें रुचि हो गयी है, वह यह सब नहीं चाहता।"

(भजन-रहस्य 'रुचिभजन' ४/५)

प्र. ६—रुचिपूर्वक भजन कैसा होता है?

उ.—

"अनन्य भावेते कर श्रवण-कीर्तन।
नाम-रूप-गुण-ध्यान कृष्ण आराधन॥
सङ्गे सङ्गे अनर्थ नाशेर यत्न कर।
भक्तिलता फल दान करिबे सत्वर॥

अर्थात् यदि अनन्य भावसे कृष्णके नाम, रूप, गुण आदिका श्रवण-कीर्तन करते हुए उनकी आराधना की जाय तथा साथ ही अनर्थोंको नाश करनेकी चेष्टा भी की जाय, तो अतिशीघ्र ही भक्ति लता प्रेमफल प्रदान करती है।" (भजन-रहस्य 'रुचिभजन' ४/६)

प्र. ७—भगवानकी सेवामें रुचि उत्पन्न होनेपर क्या कभी जड़ विषयोंके प्रति शोक-मोह आदि रह सकता है?

उ.—

"पुत्र कलत्रेर शोक, क्रोध, अभिमान।
ये हृदये, ताहे कृष्ण स्फूर्ति नाहि पान॥

अर्थात् जिसके हृदयमें पुत्र, कलत्रके प्रति शोक, क्रोध तथा अभिमान रहता है, उसके हृदयमें कृष्णकी स्फूर्ति नहीं होती।"

(भजन-रहस्य 'रुचिभजन' ४/८)

प्र. ८—भक्तोंके सङ्गमें कृष्णचरणोंकी सेवामें रुचि कैसी होती है?

उ.—

"एइ ब्रह्मजन्मेइ वा अन्य कोन भवे।
पशु-पक्षी हये जन्मि तोमार विभवे॥
एइमात्र आशा तव भक्तगण-सङ्गे।
थाकि तव पदसेवा करि नाना रङ्गे॥

अर्थात् इसी ब्रह्मा जन्ममें या अन्य किसी भी जन्ममें, यहाँ तक कि पशु-पक्षी योनिमें भी जन्म क्यों न प्राप्त करूँ, मेरी एक ही आशा है कि आपके भक्तोंके साथमें रहकर तरह-तरहसे आपके चरणोंकी सेवा करूँ।"

(भजन-रहस्य 'रुचिभजन' ४/१३)

प्र. ९—कृष्णके गुण-गान श्रवण-कीर्तनमें रुचि कैसी होती है?

उ.—

"याहाते तोमार पदसेवा-सुख नाइ।
सेइरूप वर आमि कभु नाहि चाइ॥
भक्तेर हृदय हैते तव गुणगान।
सुनिते अयुत कर्ण करह विधान॥

अर्थात् जिसमें आपके चरणोंकी सेवाका सुख नहीं है, मैं ऐसा वर कभी नहीं चाहता। मैं तो केवल यही चाहता हूँ कि भक्तोंके हृदयसे आपका गुणगान श्रवणके लिए आप मुझे दस हजार कान प्रदान करें।"

(भजन-रहस्य 'रुचिभजन' ४/१७)

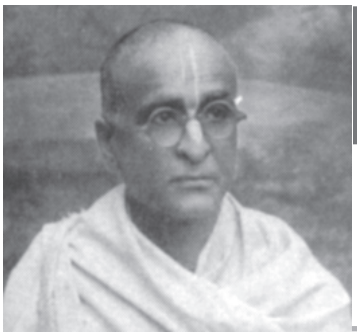

श्रील प्रभुपादका उपदेशामृत

(वर्ष ७, संख्या ८, पृष्ठ १७७ से आगे)

प्र. ५७७—क्या जीव पुरुष है?

उ.—जीव या आत्मा स्वरूपतः स्त्री, पुरुष या नपुंसक नहीं है। स्त्री-पुरुष तो केवल देहका परिचयमात्र है। जीव देह नहीं है, जीव देही—आत्मा है। आत्मा परमात्माका सेवक है। जीव जड़ नहीं है, चेतन है। आत्मा परमात्माका दर्शन प्राप्त करता है। आत्मा परमात्माके साथ बात कर सकता है। भावानुसार जीवका चेतन देह प्रकाशित होता है। जो मधुररससे भजन करते हैं, वे स्त्री-मूर्ति—कृष्णकी कान्ता हैं। तथा जो सखाओंके आनुगत्यमें सेवा करते हैं, उनका पुरुष-देह है। जीवका नित्यशुद्ध देह चिन्मय है, उसमें स्त्री-पुरुषका भेदभाव नहीं है। जब जैसा भाव होता है, उसके अनुसार ही शुद्धजीव स्त्रीत्व या पुरुषत्व प्राप्त करता है।

प्र. ५७८—सद्गुरुचरणाश्रयका क्या फल है?

उ.—जीव सद्गुरुके आनुगत्यके द्वारा भजनराज्यमें चरम उन्नति प्राप्त कर सकता है। गुरु-कृष्णकी सेवाके फलसे प्राकृत अभिमान नष्ट होनेपर जीवको गोलोक-प्राप्ति होती है। जीव निष्कपट सेवाके फलसे मुक्तगणका, यहाँतक कि नित्यमुक्तोंके समपर्यायभुक्त अर्थात् उनके समान भावको प्राप्त कर सकता है। श्रीगुरु-नित्यानन्द रक्तमांसके पिण्डमात्र नहीं हैं। श्रीगुरुनित्यानन्दका पदाश्रय करनेपर जीवके समस्त ताप दूर हो जाते हैं।

प्र.—५७९—संसार अच्छा क्यों लगता है?

उ.—गुरु-वैष्णवोंको उद्वेग देनेसे लोगोंका अमङ्गल होता है। वे साधारण मानुष नहीं हैं; गुरु-वैष्णव बज्रसे भी कठोर तथा कुसुमसे भी कोमल होते हैं। जगतके लोगों तथा विष्णुभक्तोंके साथ एक समान व्यवहार करनेपर कल्याण नहीं होगा। गुरु-वैष्णवोंको लेकर खेल करना उचित नहीं है। वे बहुत ही खतरनाक लोग होते हैं।

सिर झुकाकर शासन स्वीकार न करनेपर उसे शिष्य नहीं कहा जा सकता। मठवासीका आचार-विचार छोड़ देनेपर संसारी होना पड़ेगा। मठका स्वार्थ एवं मठसेवाका गुरुत्व या माहात्म्य अनुभव न होनेपर ही संसार अच्छा लगेगा। मठ साक्षात् वैकुण्ठ है तथा संसार नरकका द्वारस्वरूप है। भगवात्-कृपासे विमुख होनेपर ही जीवका पतन या संसार होता है।

श्रीमद्भागवत (३/९/१०)में कह रहे हैं—

अहन्यापृतार्तकरणा निशि निःशयाना,
नानामनोरथधिया क्षणभग्ननिद्राः।

दैवाहतार्थरचना ऋषयोऽपि देव,
युष्मत्प्रसङ्गविमुखा इह संसरन्ति॥

अधोक्षज कृष्णकी निरन्तर सुखकामनाका नाम ही सेवा है। सर्वक्षण कृष्णसेवाकी चेष्टाके अतिरिक्त हमारा अन्य कोई कार्य नहीं है। श्रीनामभजनसे ही सर्वसिद्धि होती है। श्रीनामके भजनके बिना नामीका भजन नहीं होता। कृष्णका दास होनेपर ही हमारा मङ्गल होगा। किन्तु मायाकी सेवा करनेपर अमङ्गलके हाथसे हमारा उद्धार नहीं है।

प्र. ५८०—हरिकथा सुननेपर भी हमारा मङ्गल क्यों नहीं हो रहा है?

उ.—कान बन्दकर श्रवण करनेपर क्या होगा? अन्यमनस्क होकर श्रवण करनेपर तो श्रवण नहीं होगा। अन्यमनस्ककी तो बात ही क्या, केवल मन देकर सुननेसे भी नहीं होगा। क्योंकि मन तो अस्थिर है। सुननेका अर्थ है—आचरण करना। श्रवणीय विषयका आचरण न करनेपर उसका फल कैसे प्राप्त हो सकता है? इसीलिए प्राण देकर हरिकथा सुननी चाहिए। तभी उसका फल प्राप्त होगा।

प्र. ५८१—भक्ति एवं भोग क्या अलग-अलग वस्तुएँ हैं?

उ.—अवश्य ही। भक्ति एवं भोग एक वस्तु नहीं हैं। जहाँपर भक्ति है, वहाँपर भोग नहीं है। जहाँपर भोग है, वहाँपर भक्ति नहीं है। भोक्ताभिमानसे भोग होता है तथा भगवत्सेवक-अभिमानसे भक्ति होती है। भोग अन्धकार-स्वरूप तथा भक्ति प्रकाशमयी है। भोग—निजेन्द्रियतर्पणमय तथा भक्ति—कृष्णसुखविधानमयी है। जब हम भोगोंकी ओर जाते हैं, तब शोक, मोह तथा भय हमें घेर लेते हैं। तब अनित्य वस्तुमें आसक्त होनेका परिणाम भगवान हमें समझा देते हैं। अतः सतर्क होकर भगवानका भजन करना ही बुद्धिमानका कार्य है। भोग तो दुःखोंका रास्ता है। किन्तु भक्ति सुख प्राप्तिका उपाय है।

प्र. ५८२—भक्तका दर्शन कैसा होता है?

उ.—भक्त समस्त वस्तुओंको भगवानकी सेवाका उपकरण मानते हैं। भोग्य-दर्शनके स्थानपर सेव्यदर्शन होनेपर सेव्यके उपकरण भी हमारे लिए सेव्य हैं—उनका ऐसा विचार होता है। हरिकथा श्रवण, कीर्तन तथा स्मरणमें नैरन्तर्य न रहनेपर भोग्यविचार हमें ग्रास कर लेगा। यदि हम प्रजल्पोंमें मग्न हो जायँ—व्यर्थकी बातोंमें प्रमत्त हो जायँ, तो सत्सङ्ग तथा भगवानकी सेवाका विचार खो बैठेंगे, ग्रामवास कर बैठेंगे तथा नाना प्रकारकी असुविधाओंमें पड़ जायेंगे।

हरिकथा श्रवण-कीर्तन ही साधन तथा साध्य है। हमने कितने भाग्यके फलसे मनुष्यजन्म पाया है। कितने भाग्यके फलसे गुरुकृष्णकी कृपासे भगवानकी सेवाका सौभाग्य प्राप्त किया है। यदि हम प्रजल्पोंमें ही समय बिता दें, तो यह सौभाग्यका अनादर करना हो जाता है। अतः सब समय हरिकथा आलोचना तथा हरि सम्बन्धीय विषयोंका अनुशीलन करना ही कर्तव्य है। इसीके द्वारा ही जीव भक्त हो सकता है। सुदर्शन प्राप्तकर कुदर्शन-मांसदर्शन या भोग्यदर्शनसे बचकर सुखी हो सकते हैं।

(क्रमशः)

—'श्रील प्रभुपादके उपदेशामृत' से अनुवादित

आचार्य-केशरी श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजजीकी प्रबन्धावली

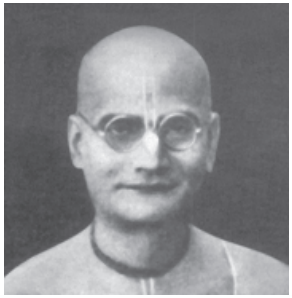

चट्टोपाध्याय महाशयके पत्रका उत्तर

(वर्ष ७, संख्या ८, पृष्ठ १८० से आगे)

कोई-कोई प्राकृत साधारण धर्म-सम्प्रदायके आचार्यगण कहते हैं—'पापसे घृणा करना, पापीसे नहीं'—इस युक्तिके अनुसार चट्टोपाध्याय महाशय कह सकते हैं—शङ्करकी युक्ति-विचारको नास्तिक्यवादके रूपमें घृणा या अग्राह्य बोला जा सकता है, किन्तु आचार्य शङ्करकी कभी भी निन्दा करना उचित नहीं है। यह बात सुननेमें मधुर तो लग सकती है, किन्तु यह लेशमात्र भी विचारसङ्गत नहीं है। गुणीके बिना गुणोंका अधिष्ठान असम्भव है। गुण किसी वस्तुको आश्रय किये बिना नहीं रह सकता। इसीलिए वैदान्तिक शास्त्रोंमें उल्लिखित है—**'शक्तिशक्तिमतोरभेदः'** अर्थात् शक्ति-शक्तिमानमें भेद नहीं है। जो गुणोंके बिना गुणीका विचार करते हैं, उन्हें अवैदिक तथा शास्त्रज्ञानहीन मानना होगा। वेदोंमें बहुतसे पापकार्योंके प्रायश्चित्तका उल्लेख है। पापी यदि घृणित नहीं होता, यदि वह पुण्यवानके समान ही होता, तो प्रायश्चित्त करेगा कौन? यहाँतक कि वर्तमान जगतके कानून-अदालतोंको भी उठा लेना चाहिए। क्योंकि चोरको कुछ कहा नहीं जा सकता, उसका तो कोई दोष ही नहीं है, उसके किसी कर्मका दोष नहीं है। अतः चोरको दण्ड देनेसे क्या लाभ? यहाँतक कि किसीके घरमें चोरके प्रवेश करनेपर उसे निषेध करना अन्याय होगा। गृहस्थको सावधान करना पापकर्म होगा—चोर डकैतोंको सजा देना अधर्ममें परिगणित होगा। अतः जो 'पापसे घृणा करो, पापीसे घृणा मत करना'—ऐसी बात कहते हैं, वे अपने पापकार्योंको आश्रय देनेके लिए ही ऐसा कहते हैं। वे पाप कार्य करेंगे, फिर भी उनकी निन्दा मत करना—यही उनकी शिक्षा होती है। हम ऐसे मतवादोंको प्रश्रय देनेके लिए प्रस्तुत नहीं हैं। ऐसी युक्तियोंकी प्रतियोगितामें और भी कहा जा सकता है—पुण्यकी प्रशंसा करना, पुण्यवानकी प्रशंसा मत करना। क्या कोई नीतिवादी धार्मिक-सम्प्रदाय इस युक्तिको स्वीकार कर सकता है? यदि पुण्यवानकी प्रशंसा की जाती है, तो पापीकी निन्दा भी करनी ही होगी। अन्यथा पुण्य-पापका अनादर अथवा आदर करनेपर पुण्यवान तथा पापीके प्रति समान व्यवहार करना होगा अर्थात् दोनोंकी ही प्रशंसा या दोनोंसे ही घृणा नहीं करना होगा। ऐसी उर्वर-मस्तिष्ककी लोक-वञ्चनामयी शिक्षा समाजके लिए कितनी हानिकर हो रही है, समाज इसे देखकर भी नहीं देख

रहा है। किसी गृहस्थके घरमें पूर्व परिचित कोई चोर-डकैत एवं साधु या संन्यासीके उपस्थित होनेपर क्या दोनोंके साथ समान व्यवहार करना उसका कर्तव्य है? किन्तु शास्त्रोंने हमें शिक्षा दी है (श्रीमद्भा॰ ११/२६/२६)—**'ततो दुःसङ्गमुत्सृज्य सत्सु सज्जेत बुद्धिमान्'** अर्थात् बुद्धिमान व्यक्ति असत्सङ्ग त्यागकर सत्सङ्ग करेंगे—यही शास्त्रका उपदेश है। चट्टोपाध्याय महाशयके प्रशंसित तथा पूज्य श्रील शङ्कराचार्यने भी मेरी इस युक्तिका समर्थन किया है। उनके शारीरक भाष्यमें इस विषयमें प्रचुर प्रमाण मिलते हैं। यहाँतक कि उन्होंने मोह-मुद्गर (१३) में भी लिखा है—**'क्षणमिह सज्जनसङ्गतिरेको, भवति भवार्णवतरणे नौका।'**

माननीय चट्टोपाध्याय महाशयने बसिरहाटमें प्रदत्त वक्तृताके प्रतिवाद-पत्रका उत्तर देते न देते पुनः एक विस्तृत प्रतिवाद भेजा है। अपने प्रदत्त उत्तरके प्रसङ्गक्रममें मैंने चट्टोपाध्याय महाशयसे १३५७ (ई॰ १९५०) सालके द्वितीय वर्षकी श्रीगौड़ीय पत्रिकामें "श्रीजन्माष्टमीमें दार्शनिक आलोचना" शीर्षक वाले प्रबन्धको पाठ करनेका अनुरोध किया था। उसमें अद्वैतवाद या मायावादकी अयौक्तिकता तथा असारता सुष्ठुरूपसे सम्पूर्णरूपसे प्रमाणित हुई है। ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने यह प्रबन्ध पाठकर समझ लिया कि यह प्रबन्ध अद्वैतवादके लिए विपत्ति है।

मैं चट्टोपाध्याय महाशयको पहले प्रछन्न मायावादी मानता था। परन्तु अब देख रहा हूँ कि वे प्रकाश्य एवं पक्के मायावादी हैं। केवल इतना ही नहीं, उन्होंने जो प्रबन्ध भेजा है, उससे उनका मनोगत भाव जिस प्रकारसे प्रस्फुटित हो गया है, उसे भी निरपेक्ष समालोचकोंके सामने प्रकट करना मैं अपना कर्तव्य मानता हूँ। उनका वर्तमान प्रबन्ध मूलतः "श्रीजन्माष्टमीमें दार्शनिक आलोचना" प्रबन्धका प्रतिवाद है। वास्तवमें दुःखके साथ कहना पड़ रहा है कि चट्टोपाध्याय महाशय क्रोधित होनेके कारण मेरे उस प्रबन्धको अच्छी प्रकारसे समझ नहीं पाये। मैं सहृदय पाठकोंसे उक्त चार संख्यामें प्रकाशित प्रबन्धको पाठ करनेका अनुरोध कर रहा हूँ। उसमें किसी प्रकारकी भाषाकी जटिलता नहीं है तथा सिद्धान्तोंके गूढ़ विचार सुस्पष्टरूपसे आलोचित हुए हैं। उन्होंने मुझे अकारण ही 'असत्कारणवादी' कहा है। मैं सम्पूर्णरूपसे 'असत्कारणवाद' को अस्वीकार करता हूँ। प्रसङ्गक्रमसे श्रील शङ्कराचार्यके 'शारीरक भाष्य' से प्रमाण उठाकर दिखाऊँगा कि उन्होंने 'असत्कारणवाद' को कैसे आश्रय दिया है। वैष्णवोंने सम्पूर्णरूपसे इसका प्रतिवाद किया है। अद्वैतवादी यदि न्याय शास्त्रको असत्कारणवादी होनेके कारण अस्पृश्य मानते, तो कभी भी न्यायकी युक्तियोंका आश्रय लेकर अपने मतका स्थापन करनेके लिए जी-जानसे चेष्टा नहीं करते। यदि न्यायकी सहायतासे 'अद्वैतसिद्धि' के समान ग्रन्थ रचित हो सकता है, तो न्यायकी सहायतासे ही उसका खण्डन भी क्यों नहीं किया जायेगा? स्वार्थपरता ही युक्तिहीनताका लक्षण है।

प्रतिवादीके दूसरे प्रबन्धमें उनके मनोगत भावोंमें-से दो-एकका निदर्शन मैं कर रहा हूँ—

(१) "श्रीमद् महाराजको मैंने जो प्रथम पत्र भेजा था, उसमें मैंने उनसे अपना प्रतिवाद पत्र छापनेके लिए अनुरोध नहीं किया था; क्योंकि वाद-प्रतिवाद उठनेपर ही अनेक समय अप्रिय मन्तव्य आ जाते हैं।"

(२) मैं समझ गया था कि "अद्वैतवादियोंके ऊपर अत्याचार करते समय श्रीमन्महाराज आत्मविस्मृत होनेकी अवस्थामें पहुँच गये हैं।"

यहाँपर पूर्व प्रकाशित कुछ बातोंके प्रति पाठकोंकी दृष्टि आकर्षण कर रहा हूँ। प्रतिवादीने प्रथम पत्रके अन्तमें लिखा है—"शङ्करकी श्रीकृष्णके एकनिष्ठ भक्तके रूपमें विवेचनाकर उन्हें वैष्णवमर्यादामें प्रतिष्ठित करते हुए प्रबन्ध प्रकाशकर हमें ❁ ❁ ❁ चिरकृतज्ञ करें।"

इस युक्तिसे स्पष्ट ही समझमें आ रहा है कि उनका प्रबन्ध प्रकाशकर शङ्कराचार्यको वैष्णवके रूपमें स्वीकार किया जाय। किन्तु दार्शनिक समाजने आचार्यको वैष्णवके रूपमें स्वीकार नहीं किया है। विशेषरूपसे स्वयं शङ्करसम्प्रदायके लोग भी अर्थात् अद्वैतवादी या मायावादी कभी भी इसे अङ्गीकार नहीं करेंगे।

भगवद्भक्त वैष्णवगण जिस प्रकारसे परब्रह्म भगवानको सच्चिदानन्द, नित्य तथा सनातन वस्तुके रूपमें स्वीकार करते हैं, उसी प्रकार अणुचैतन्य भगवद्भक्त समस्त जीव भी नित्य एवं सनातन हैं। इसके अतिरिक्त जीव एवं भगवानके मध्यवर्ती भक्तिवृत्ति भी नित्या तथा सनातनी है। सेव्य, सेवक तथा सेवाके नित्यत्वको ही भगवद्भक्त श्रीव्यासदेवके द्वारा रचित सिद्धान्तके रूपमें ग्रहण करते हैं।

आचार्य शङ्करने इस तत्त्वत्रयकी नित्यताको कहीं भी स्वीकार नहीं किया। दुःखका विषय है कि चट्टोपाध्याय महाशयने शङ्करभाष्यकी आलोचना नहीं की। यदि की होती, तो वे इस सत्यको सिर झुकाकर स्वीकार कर लेते। आचार्य शङ्करकी कष्टकल्पनामें, तकमें तथा विचारोंमें एक वस्तुके अतिरिक्त द्वितीय वस्तुका नित्यत्व स्वीकृत नहीं हुआ है। 'जो कुछ भी भेद या द्वैत एवं जो कुछ भी प्रत्यक्ष है, वह सब मिथ्या है'—शङ्करने ऐसा ही प्रतिपन्न करनेकी चेष्टा की है। यद्यपि ऐसा बिल्कुल भी नहीं हुआ। आचार्यने निर्गुण श्रुतियोंको बहुमाननकर अन्यान्य श्रुति, स्मृति, पुराण, इतिहास आदि बहुतसे ग्रन्थोंको अस्वीकार किया है। उन्होंने ऐसी युक्ति भी दिखाई है कि वेदकी प्रामाणिकताको स्थिर करनेके लिए भी उसमें स्वकपोल-कल्पित तर्कोंकी आवश्यकता है। जबकि 'तर्ककी प्रतिष्ठा नहीं है'—ऐसा वेद-वेदान्तका सुस्थिर सिद्धान्त है।

हाँ, इतना अवश्य है कि आचार्य शङ्करने 'शारीरक भाष्य' बहुत अच्छी प्रकारसे लिखा है। प्रत्येक धर्मशास्त्रमें ही युक्तिसङ्गतरूपमें बहुतसी बातें लिखीं रहती हैं। अन्यथा साधारण मनुष्यका उत्साह उन ग्रन्थोंको ग्रहण करनेमें क्यों होगा? यिशुखृष्टके बाइबल अर्थात् Old testament तथा New testament में कथित ज्ञान तथा वैराग्य आदि बहुत-सी अच्छी बातें शङ्करभाष्य तथा उनके अन्यान्य ग्रन्थोंमें पायी जाती है। यहाँतक कि बौद्ध, जैन, कापालिक, कर्मी तथा मुसलमानोंकी बहुतसी अच्छी-अच्छी बातें आचार्य शङ्करके ग्रन्थोंमें पायी जाती हैं। इसलिए क्या श्रीशङ्करको खृष्टियन, बौद्ध, जैन या मुसलमान आदि कहा जा सकता

है? परस्पर धर्मग्रन्थोंमें कई साधारण बातें समानरूपसे देखी जाती हैं। केवल इसीके आधारपर सभी धर्ममतोंको एक समान नहीं कहा जा सकता, क्योंकि सभीको समान माने जानेपर पण्डितोंमें फिर ऐसा तारतम्यमूलक सम्प्रदाय नहीं देखे जाते। प्रत्येक धर्ममतके मूल तत्त्वविचारमें जो पार्थक्य परिलक्षित होता है, उसीके आधारपर दार्शनिक पण्डितोंमें विचार होता है। ऐसा नहीं होता तो स्वयं शङ्करने ही सांख्य, पातञ्जल, न्याय, वैशेषिक, बौद्ध, जैन, कापालिक आदि मतवादियोंका खण्डन क्यों किया?

दूसरी बात, चट्टोपाध्याय महाशयने व्यक्तिगत-रूपसे मुझपर आरोप लगाया है—मैंने अद्वैतवादियोंके ऊपर अत्याचार किया है। किन्तु मैं इसे पूर्णरूपसे अस्वीकार करता हूँ। मेरा वक्तव्य है कि अद्वैतवाद असार तथा युक्तिविरुद्ध है। इसे मैंने "श्रीजन्माष्टमीमें दार्शनिक आलोचना" प्रबन्धमें संक्षेपमें दिखाया है। क्या यही अद्वैतवादियोंके ऊपर अत्याचार हो गया? यदि विचार-युक्तिमें तथा शास्त्र आदिके प्रमाणसे मायावाद या अद्वैतवाद अयौक्तिक प्रतिपन्न होता है एवं वैष्णवोंका भक्तिसिद्धान्त ही सार वस्तुके रूपमें गृहीत होता है, तो निरपेक्ष व्यक्ति इससे संतुष्ट ही होंगे। परन्तु चट्टोपाध्याय महाशयने इसे 'अत्याचार' कहकर अपना असली मुखड़ा खोल ही दिया। वे जितना ही "श्रीकृष्णचैतन्यदेव (?) जयति" एवं "श्रीकृष्णचैतन्यकी इच्छा ही पूर्ण हो" ऐसा क्यों न लिखें, वे वास्तवमें श्रीचैतन्य विरोधी हैं, यह उनकी लेखनीका प्रत्येक शब्द ही प्रमाणित करता है। कोई महाप्रभुको मानते हैं, श्रीजीवगोस्वीमीको नहीं मानते हैं, कोई जीवगोस्वामीको मानते हैं, किन्तु बलदेव विद्याभूषणको नहीं मानते; कोई कविराज गोस्वामीके साथ वृन्दावनदास ठाकुरके विचारोंमें मेल न पाकर श्रीचैतन्यके विद्वेषी हो जाते हैं; कोई 'विमानविहारी' होकर निराकार-निर्विशेष आकाशमें उड़ने जाते हैं, परन्तु पंख टूट जोनेके कारण मोहान्धकूपमें पतित हो जाते हैं। ये सभी "अचिन्त्य-भेदाभेद-तत्त्व" के छद्मवेशी दौरात्म्यकारी हैं। (असम्पूर्ण)

—श्रीगौड़ीय-पत्रिका (वर्ष-३, संख्या-५,८) से अनुवादित

❀ ❀ ❀ ❀

वैष्णवोंके व्यवहारिक दुःख उनके लिए परमानन्द सुख स्वरूप है

जत देख वैष्णवेर व्यवहार-दुःख।
निश्चय जानिह सेइ परानन्द सुख॥
विषय मदान्ध सब किछुह ना जाने।
विद्या, कुल, धन-मदे वैष्णव ना चिने॥

(श्रीचैतन्य-भागवत मध्य-लीला ९/२४०-२४१)

वैष्णवोंके जो व्यवहारिक दुःख दीखते हैं, वे निश्चित रूपमें उनके लिए परमानन्द सुख स्वरूप हैं। विषय मदमें अन्ध व्यक्ति इन अप्राकृत विषयोंके सम्बन्धमें कुछ भी नहीं जानते हैं। विद्या, कुल और धनके अहङ्कारमें मत्त रहनेके कारण वे वैष्णवोंको पहचान नहीं सकते।

ॐ विष्णुपाद १०८श्री श्रीमद्भक्तिवेदान्त वामन गोस्वामी महाराजजीकी पत्रावली

गृही-भक्तोंके लिए मठ-मिशनकी भाँति श्रीमन्दिर तथा श्रीविग्रह आदिकी सेवा-पूजा परिचालना असम्भव है

श्रीश्रीगुरु-गौराङ्गौ जयतः

श्रीबालानन्द आश्रम
'सन्तोष आश्रम'
पो॰—आश्रम करणीवाद, देवघर (बिहार)
ता॰—१४/१/१९८१

श्रीवैष्णवचरणे दण्डवन्नति पूर्विकेयम्—

❁❁❁ प्रभो! आपका ९/१/८१ ता॰ को भेजा गया अन्तर्देशीय पत्र आज यहाँपर प्राप्त हुआ। इससे पहले पुरीधाममें रहते समय ३१वें श्रावण (१८/८/८०) को भेजा गया पत्र भी प्राप्त हुआ था। उस समय शरीर अस्वस्थ रहनेके कारण पत्रका उत्तर न दे सका, इसके लिए क्षमाप्रार्थी हूँ।

मैं अपने डाक्टर ❁❁❁ तथा ❁❁❁ के परामर्शानुसार जलवायु परिवर्तनके लिए गत ६/१२/८० ता॰ को वैद्यनाथ-देवघर आया हूँ। यहाँ आकर मेरा स्वास्थ्य बहुत अच्छा हुआ है। नियमितरूपसे मैं औषधी ले रहा हूँ, प्रसाद पा रहा हूँ तथा विश्राम कर रहा हूँ। बहुत दिनोंसे पत्र न लिखनेके कारण अनभ्यास हो गया है। आज २/१ पत्र लिख रहा हूँ।

वैद्यनाथ-देवघरकी जलवायु बहुत ही स्वास्थ्यकर है। प्राकृतिक दृश्य भी बहुत ही मनोरम हैं। हमने 'सन्तोष आश्रम' नामक घर श्रीबालानन्द आश्रमके प्रबन्धकर्तासे २००रु॰ मासिक भाड़ेपर लिया है। आश्रमीय परिवेश बहुत ही सुन्दर है। चारों ओर मन्दिर, तालाब, फल-मूल-सब्जियोंके बाग-बगीचे आश्रमकी शोभाको बढ़ा रहे हैं। देवघर वैद्यनाथजी शिवपुराणमें प्रसिद्ध तीर्थस्थान है। यहाँसे ३५/४० मील दूर मान्दार-पर्वतपर श्रीमधुसूदनजी विशेष दर्शनीय तीर्थस्थान हैं। यहींपर समुद्रमन्थन हुआ था।

आप टाइफाइड रोगग्रस्त हो गये थे एवं दीदी भी बिमारीसे बेहोश हो गयी थी, यह जानकर बहुत दुःखी हुआ। आशा करता हूँ कि इतने दिनतक आप दोनों ठीक हो गये होंगे। श्रीभगवान आपको स्वस्थ रखें, आप निश्चिन्त होकर हरिभजनमें रत रहें। सांसारिक असुविधाएँ तो चिरकालसे ही हैं तथा रहेंगी भी—**"मन स्थिर करि निर्जने बसिया, कृष्णनाम**

गाब जबे। संसार फुकार काने ना पशिबे, देह रोग दूरे रबे॥" (शरणागति, भजनलालसा १२) [अर्थात् हे गुरुदेव! कब वह दिन आयेगा जब आपकी कृपासे मैं अपने मनको स्थिर कर कुसंग रहित स्थानमें बैठकर श्रीकृष्णनाम गाता जाऊँगा जिससे सांसारिक बातें मेरे कानोंमें प्रवेश नहीं कर पायेंगी और देह-रोग दूर रहेगा।] आपने सत्य ही लिखा है—"संसारमें जो होता है, होता रहे, जो घटता है, घटता रहे, केवल वैष्णवोंका दर्शन-स्पर्शन आदि ही बद्धजीवके लिए मङ्गलदायक विषय है।"

आप वैष्णव सङ्गसे कभी भी वञ्चित नहीं होंगे। श्रीपाद ❁❁❁ महाराज तथा अन्यान्य शुद्धवैष्णवगण आपके यहाँ आते-जाते रहते हैं, यह खूब ही सौभाग्यकी बात है। आप वैष्णवोंके विशेष कृपापात्र हैं, इसलिए आपके लिए चिन्ता करनेकी कोई बात नहीं है। परम दयालु वैष्णवगण गृहान्धकूपसे जीवोंका उद्धार करनेके लिए गृहस्थोंके द्वार-द्वारपर जाते हैं, यह सत्य है। जगतके जीवोंके प्रति उनकी दयादृष्टि अवश्य ही है।

❁❁❁ आपने लिखा है—"आपका दर्शन फिर कब होगा? वैष्णवसङ्गसे इस जीवनमें किसी भी प्रकारसे वञ्चित न होऊँ। मैं गृहमेधी हूँ, मेरी कोई योग्यता नहीं है। हमसे सैकड़ों अपराध होनेपर भी आप हमें क्षमा करेंगे। मुझे भाषाका लेशमात्र भी ज्ञान नहीं है, लिखनेकी योग्यता भी मुझमें नहीं है। मेरी केवल यही कामना है कि जिससे मैं आपकी कृपा पाऊँ तथा हमारे ऊपर आपकी कृपादृष्टि रहे।" तुम्हारा मेरे लिए ऐसा लिखना ठीक हुआ कि नहीं, इसका स्वयं ही विचार करना। मैं क्या आपका ऊपरवाला हूँ, अभिभावक हूँ या विचारक हूँ? मैंने कभी भी अपनेको ऐसा नहीं माना। अतः इस विषयमें आप मुझे मुक्त करें तथा क्षमा करें। आपलोग मुझे पहचान नहीं पाये, यही दुःखकी बात है। मैं वैष्णवोंके ऊपर वैष्णवगिरि नहीं करता तथा करना चाहता भी नहीं। मठ-मिशनमें हूँ, अतः नियमानुसार हो सकता है कि बाध्य होकर कभी कुछ करना पड़ता है। दयाकर मुझे समझनेमें भूल नहीं करेंगे, यही आपसे अनुरोध है।

काशीनगरमें मुझे जानेके लिए आवाहन किया है। क्या आवाहनके बिना नहीं जाया जा सकता? क्या मैंने पूर्णरूपसे अपनी व्यक्तिगत स्वतन्त्रता खो दी है, जिसके लिए मैं बिना किसीके आवाहनके उस ओर नहीं जा सकता? इस विषयमें अनुरोध करनेकी क्या बात है? मुझे जब सुयोग मिलेगा, मेरे लिए सुविधा होगी तथा मेरा कोई प्रयोजन होगा, तो मैं वहाँ चला जाऊँगा। मेरी एक स्वतन्त्र स्वाधीनता तथा विचार है, जिसे मेरे मठ-मिशनके लोग भी नहीं जानते, मैं भी किसीको जानने नहीं देता।

काशीनगरमें आपके मन्दिर स्थापनकी चेष्टामें मैंने बराबर बाधा प्रदान की है। क्योंकि २ दिन बाद ही सेवापूजाकी समस्या होगी। श्रीवेदान्त समिति इस मन्दिरको नहीं लेगी, इसे पहलेसे ही जाननेके कारण आपको भी मैंने बता दिया था। किन्तु आपने मेरी बातोंपर

ठीकसे ध्यान नहीं दिया, जिसके फलस्वरूप इस समय विपत्तिमें पड़ गये हैं। अब आपके लिए ठाकुरकी सेवा-पूजा छोड़कर कहीं २/१ दिनके लिए रहना भी कठिन हो गया है। आप यदि स्वयं अपने हाथोंसे सेवा-पूजा करते तो और न जाने कितनी असुविधामें पड़ जाते, यह चिन्तासे बाहर है।

मैंने आपकी 'भक्तिगीति' पहले नहीं देखी थी, पत्रिका-कार्यालयसे प्राप्तकर उसके सम्बन्धमें क्या करणीय है, केवल यही आपको निवेदन किया है। आपत्ति आ गयी है, इसीलिए व्यवस्था करनी पड़ रही है। कोई आपको गलत ना समझें या आपके द्वारा मिशनके लिए जानबूझकर या अनजानमें कोई असुविधा न हो जाय, इस विषयमें अवश्य ही मेरा दायित्व है तथा हमेशा रहेगा। 'भक्तिगीति'की बाकी कापियाँ श्रील गुरु महाराजके विरहोत्सवमें श्रीपाद ❁❁❁ महाराज अथवा ❁❁❁ के पास जमा करनेकी बात मैंने लिखि थीं। बादमें सुना कि किसीके माध्यमसे १ कापी आफिसमें भेजी है। जब आप स्वयं वहाँपर उपस्थित थे, तो क्या अपने हाथोंसे उसे जमा कराना उचित नहीं था? यह ग्रन्थ भविष्यमें आप नहीं छापेंगे, यही आपसे अनुरोध है।

और एक बात आपसे निवेदन कर रहा हूँ। मैने सुना है कि श्रीवेदान्त समितिके मठत्यागी आजकल गेरुवे वस्त्र परित्यागकर आपके यहाँ पुजारीका काम कर रहे हैं। वह मठ छोड़कर घर जाकर संसार कर सकते हैं। किन्तु आपने किसकी अनुमतिसे उन्हें वहाँ रखा है, समझमें नहीं आता। ऐसा करनेपर क्या मठके साथ आपके सम्बन्ध अच्छे रह सकते हैं? वह बेलगाछिमें टालीके कारखानेमें काम खोजने गया था। परन्तु उसे काम नहीं मिला। इसलिए यदि आप भी उसे वहाँ नहीं रखेंगे, तो अच्छा ही होगा। ऐसे दाम्भिक, सुविधावादी तथा स्वेच्छाचारी लोगोंका कभी भी मङ्गल नहीं हो सकता। यदि आप उसे अपने ठाकुर-मन्दिर पूजासे छुड़वा देंगे, तो मैं निश्चिन्त हो जाऊँगा। श्रीव्यासपूजासे पहले काशीनगर की ओर जानेका सुयोग नहीं होगा, बादमें जानेकी इच्छा है।

January से अन्ततः ३ महिने तक मेरे लिए पाठ-कीर्तन निषिद्ध है; अतः यदि जाना भी होगा तो केवल बैठे रहनेके अतिरिक्त कोई उपाय नहीं है। आप मेरा दण्डवत् ग्रहण करेंगे तथा अन्यान्य सभीको मेरा स्नेहाशीर्वाद। ❁❁❁❁

इति—

वैष्णवदासाभास—

श्रीभक्तिवेदान्त वामन

—'श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त वामन गोस्वामी महाराजकी पत्रावली' से अनुवादित

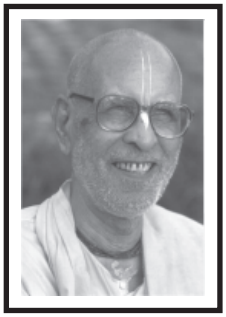

ॐ विष्णुपाद १०८श्री श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजी द्वारा प्रपूज्यचरण नित्यलीलाप्रविष्ट श्रील भक्तिप्रमोद पुरी गोस्वामी महाराजजीके आविर्भाव तिथिके उपलक्ष्यमें वर्ष २०१० में लिखित प्रबन्ध

वैष्णव चरणोंमें पुष्पाञ्जलि समर्पण

[श्रील महाराजजीके अप्राकृत चरित्रकी कुछ स्मृतियाँ]

(वर्ष ७, संख्या ८, पृष्ठ १८५ से आगे)

मदीय गुरुपादपद्मसे सम्बन्ध

मेरे परमाराध्य गुरुदेव नित्यलीलाप्रविष्ट श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजके साथ प्रपूज्यचरण श्रील महाराजजीका अत्यन्त घनिष्ठ पारमार्थिक सम्बन्ध था। श्रील महाराजजीने मदीय श्रीगुरुपादपद्मकी अप्रकट तिथिके उपलक्ष्यमें [श्रीगौड़ीय पत्रिका वर्ष—४१, संख्या—४ में] प्रकाशित एक विरह-सूचक दैन्योक्तिमें लिखा था कि "आपके इस अधम सतीर्थ कनिष्ठ भ्राताने अपने प्रथम जीवनमें आप दोनों [श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराज और श्रीश्रील नरहरि 'सेवाविग्रह' प्रभु] के स्नेहसे धन्य होकर आप दोनोंके चरण-सान्निध्यमें तीन वर्षों तक परमाराध्य श्रील प्रभुपादके श्रीचरणकमलोंकी सेवाका सुयोग प्राप्त किया था। उन दिनों आप दोनोंने अपने असीम स्नेह-भण्डारको खोलकर इस अयोग्य अधम भ्राताको अत्यधिक सेवा-उत्साह प्रदान किया था। तब मैंने विचार किया था—आप दोनोंके स्नेहके अधीन रहकर ही परमाराध्य श्रील प्रभुपादकी सेवा करते-करते इस श्रीधाम मायापुरमें ही सम्पूर्ण जीवन व्यतीत करूँगा।" उपरोक्त वचनोंसे स्पष्ट होता है कि श्रील महाराजने अपने पारमार्थिक जीवनके प्रारम्भिक तीन वर्ष श्रीधाम मायापुरमें व्यतीत किये थे तथा इनकी मेरे परमाराध्य गुरुपादपद्मके प्रति अगाध निष्ठा थी, इसलिए इन्होंने एक अन्य स्थानपर (श्रीभागवत पत्रिका वर्ष ४१ संख्या १२ में प्रकाशित प्रबन्धमें) भी लिखा है कि श्रीपाद विनोद बिहारी ब्रह्मचारी श्रील प्रभुपादके वैराग्यवान् मठवासी शिष्योंमेंसे अन्यतम ही नहीं बल्कि सर्वश्रेष्ठ थे।

श्रील महाराजने 'A Humble Submission—My Life Story' नामक प्रबन्धमें भी व्यक्त किया है कि "श्रील प्रभुपाद प्रायः अपने सभी शिष्योंको 'आप' कहकर पुकारते थे, किन्तु परमानन्द प्रभु, **विनोदबिहारी ब्रह्मचारी** (श्रील भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजका ब्रह्मचारी नाम), नरहरि दास ब्रह्मचारी तथा वैष्णव दास बाबाजीको 'तुम' कहकर बुलाते थे। यह सत्य ही है कि विनोदबिहारी प्रभु

तथा नरहरि प्रभु मायापुर आश्रम (श्रीचैतन्य मठ) के प्राण थे। इनके मधुर-प्रीतिमय व्यवहारसे भक्तोंका हृदय आनन्दसे भर जाता था, इसलिए ये श्रील प्रभुपादके असीम स्नेहके योग्यपात्र बने। मुझे नहीं लगता कि मैंने अपने सम्पूर्ण जीवनमें इन दोनों गुरुभ्राताओंके अतिरिक्त और किसीसे भी ऐसा निष्कपट स्नेहपूर्ण व्यवहार प्राप्त किया हो।

श्रील प्रभुपादका पदानुसरण करते हुए रूपानुगत्यको स्वीकार

श्रील भक्तिप्रमोद पुरी महाराज श्रील प्रभुपाद एवं उनके आश्रितजनोंके सङ्ग एवं आनुगत्यमें जिस प्रकारसे श्रीमन् महाप्रभुके मनोऽभीष्ट संस्थापक श्रीलरूप गोस्वामीके आनुगत्यमें निष्णात हुए, उनके हृद्गत भाव उनकी लेखनीसे ही सुस्पष्ट होते हैं। यथा—

श्रीचैतन्य गौड़ीय मठसे प्रकाशित श्रीचैतन्यचरितामृतकी भूमिकामें श्रील महाराजजीने स्पष्ट रूपसे वर्णन किया है कि "श्रीराय-रामानन्द संवादमें श्रीराधिकाके प्रेमको साध्य-शिरोमणि कहनेपर भी पुनः उस प्रेमके 'प्रेमविलासविवर्त्त' अर्थात् विच्छेदके समय अधिरूढ़ भाववशतः सम्भोगके अभावमें भी सम्भोगकी स्फूर्त्ति रूपी एक अवस्थाकी बात बतलानेपर श्रीमन्महाप्रभुने इसीको 'साध्यावधि' के रूपमें स्वीकार किया था। सखियोंका आनुगत्य ही साध्य वस्तुको प्राप्त करनेका एकमात्र उपाय है।

"निजेन्द्रियसुखवाञ्छा नाहि गोपीकार।
कृष्णे सुख दिते करे सङ्गम-विहार॥
सेइ गोपीभावामृते जाँर लोभ हय।
वेदधर्म त्यजि से कृष्णके भजय॥
रागानुग-मार्गे ताँरे भजे जेइ जन।
सेइ जन पाय ब्रजे ब्रजेन्द्रनन्दन॥"

(श्रीचै॰च॰ मध्य ८/२१७, २१९-२२०)

अतएव आत्मेन्द्रिय-प्रीतिवाञ्छाका लेशमात्र रहनेपर व्रजभजनमें अधिकार प्राप्त नहीं होता। यह तो निश्चित है कि 'विधि भक्त्ये व्रजभाव पाइते नाहि शक्ति' अर्थात् वैधीभक्तिमें व्रजभक्तिको प्रदान करनेकी शक्ति नहीं है, किन्तु रागभक्ति बहुत ही दुर्लभ है, इसलिए 'नाम-सङ्कीर्त्तन कलौ परम उपाय' कहकर बतलाया गया है—नाम-सङ्कीर्त्तनको ही भजनके अङ्गोंमें सर्वश्रेष्ठ भजन कहा गया है। निरपराध होकर उस नामको ग्रहण कर पानेसे नाम ही कृपा करके रागभजनमें अधिकार प्रदान करते हैं, नामानुगत्यके बिना रागाधिकार प्रदर्शन अनधिकार चर्चा मात्र है। उसका फल कभी भी शुभ नहीं होता।"

श्रील महाराजजीने श्रीचैतन्यवाणीमें प्रकाशित 'श्रीश्रीराधाष्टमी' नामक प्रबन्धमें वर्णन किया है कि—

"श्रीरूप-श्रीसनातन-श्रीरघुनाथादि गोस्वामी-वर्गने कितने ही भावोंसे परम प्रीतिपूर्वक श्रीराधारानीके माहात्म्यका वर्णन किया है। श्रीप्रबोधानन्द सरस्वती पादने स्वरचित श्रीराधारससुधानिधि ग्रन्थमें श्रीराधाजीके महिमामृतका कैसी अपूर्व चमत्कारिताके साथ आस्वादन किया है। श्रीश्रील भक्तिविनोद ठाकुरने 'स्वनियमाष्टकादि' का वर्णन करते समय तथा परमाराध्य श्रीश्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी प्रभुपादने स्वरचित श्रीचैतन्यचरितामृत के 'अनुभाष्य' में श्रीलरूप

गोस्वामीके उज्ज्वलनीलमणिमें वर्णित दश दशाओं तथा श्रीभ्रमरगीत और श्रीमहिषी गीतके पद्यानुवादमें तथा श्रील नरोत्तम दास ठाकुर महाशयके 'प्रार्थना-रस-विवृति' के मङ्गलाचरणमें, श्रीचैतन्य भागवतके गौड़ीय-भाष्यके मङ्गलाचरणमें तथा श्रील रूप गोस्वामीके उपेदशामृतकी 'अनुवृत्ति' में जिस प्रकारसे श्रीराधा-दास्यके लिए व्याकुलता प्रदर्शित की है, **वह हमारे पुनः पुनः अनुशीलनका विषय है।"**

"मेरे गुरुपादपद्म परमाराध्य प्रभुपादने जिस दिन अपने गुरुदेव ॐ विष्णुपाद श्रीश्रील गौरकिशोर प्रभुका प्रथम साक्षात्कार प्राप्त किया था, उस दिन श्रील बाबाजी महाराजको जो गीत कीर्त्तन करते-करते अवधूतके वेशमें श्रीस्वानन्दसुखद कुञ्जकी ओर आते देखा था, उस गीतको श्रील प्रभुपादने अपनी अतिप्रिय भजन-सम्पत्तिके रूपमें स्वहस्तसे लिपिबद्ध करके रखा था, **अतएव उनके दासानुदास हम लोगोंके लिए भी उस गूढ़ सम्पत्तिका सन्धान रखना एकान्त प्रयोजनीय है।** षड्गोस्वामी व्रजमें सर्वत्र ही 'हा राधे, हा राधे' पुकारते हुए अत्यन्त व्याकुल भावसे क्रन्दन करते हुए विचरण करनेका आदर्श प्रदर्शित कर गये हैं। **करुणामयी श्रीराधारानीकी निष्कपट-कृपा प्राप्तिके लिए निष्कपट क्रन्दन करना ही हमारी एकमात्र भजन-सम्पद है।** श्रीगुरुपादपद्मकी अहैतुकी कृपाके बिना उस [निष्कपट क्रन्दनरूपी भजन] सम्पदको प्राप्त करनेका अन्य कोई उपाय नहीं है। श्रील बाबाजी महाराजकी वह भजन गीति—'कोथाय गो प्रेममयी राधे राधे! ....' है।"

"इस महामूल्यवान् भजन-सम्पदको प्राप्त करनेकी लालसासे जिस दिन प्राण और मन सचमुच निष्कपट रूपसे व्याकुल हो उठेंगे, उसी दिन मैं समझूँगा कि श्रीगुरुपादपद्मने मुझे निष्कपट रूपसे आत्मसात् किया है। **आहा, मेरा ऐसा भाग्य कब होगा! जीवनके दिन तो प्रायः समाप्त हो गये हैं!"**

यद्यपि और भी अनेकानेक उदाहरण प्रस्तुत किये जा सकते हैं, किन्तु स्थानाभावके कारण केवल दो ही उदाहरण प्रस्तुत किये गये हैं।

मदीय श्रीगुरुपादपद्म तथा श्रील प्रभुपादके अन्यान्य आश्रितजनोंकी मेरे प्रति अहैतुकी कृपा

मदीय परमाराध्यतम गुरुपादपद्म नित्यलीला प्रविष्ट श्रीश्रीमद्भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराजने १९५४ ई. में मथुरामें श्रीकेशवजी गौड़ीय मठकी स्थापना कर उसी समयसे मुझपर उस मठका सेवा-भार अर्पित किया था। श्रीगुरुपादपद्मकी उस अहैतुकी कृपावशतः मथुरा मठमें ही मुझे श्रील प्रभुपादके अधिकांश आश्रितजनोंकी सेवा तथा सङ्गका सौभाग्य प्राप्त हुआ था। वे जब कभी व्रजमें आते, रेल-स्टेशन अथवा बस-अड्डेके मथुरामें ही होनेके कारण अवश्य ही श्रीकेशवजी गौड़ीय मठमें आते थे। श्रील भक्तिप्रमोद पुरी महाराज भी बहुत बार मथुरा मठमें आकर रहा करते थे। बहुत बार श्रीधाम नवद्वीप परिक्रमा एवं श्रीविग्रह प्रतिष्ठादि अन्यान्य विशेष उत्सवोंमें भी मुझे श्रील महाराजजीका संग प्राप्त हुआ था। श्रील प्रभुपादके आश्रितजनोंके मुखसे

मुझे उपरोक्त महामूल्यवान् भजन-सम्पदके विषयमें श्रवण करने एवं उनकी सेवा और कृपासे उस भजन-सम्पदकी महिमाको हृदयमें धारण करनेका सुअवसर प्राप्त हुआ था। अतः कालकी गतिसे वह अति दुर्लभ रूपानुग-भजन-सम्पद जगत्से विलुप्त न हो जाय तथा जीव चिरकालके लिए उससे वञ्चित न हो जाय, इसलिए इन्हीं गुरुवर्गोंकी विचार-धाराका अनुसरण करते हुए ही मैं जिस किसी भी स्थानपर जाता हूँ, वहाँ श्रीगुरु, श्रीगुरु-परम्परा, श्रीरूप-रघुनाथकी वाणी, श्रीचैतन्यचरितामृतकी शिक्षाओं तथा श्रीचैतन्य महाप्रभुकी धारामें आनेवाले भक्तोंको श्रीचैतन्य महाप्रभुके आविर्भावके कारण एवं अवदान वैशिष्ट्य, नाम-सङ्कीर्त्तनकी महिमा, निरपराध होकर नाम करनेकी शिक्षा, व्रजभक्ति, श्रीराधा और श्रीकृष्णके अप्राकृत प्रेम एवं साध्य और साधनका स्पष्ट रूपसे इङ्गित प्रदान करता हूँ। अतएव वास्तवमें मदीय गुरुपादपद्म, श्रील भक्तिप्रमोद पुरी गोस्वामी महाराज तथा श्रील प्रभुपादके परिकरवर्ग ही मेरी प्रचार-सेवाके प्रेरणास्रोत हैं। मैं परमाराध्य श्रील गुरुपादपद्म नित्यलीलाप्रविष्ट ॐ विष्णुपाद श्रीश्रीमद् भक्तिप्रज्ञान केशव गोस्वामी महाराज एवं श्रील प्रभुपाद भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुरके अनुगतजनोंका उच्छिष्ट-भोजी दास हूँ, इसके अतिरिक्त मेरा अपना पृथक् (स्वतन्त्र) परिचय या अस्तित्व नहीं है।

श्रील भक्तिप्रमोद पुरी गोस्वामी महाराजकी आविर्भाव-तिथिके शुभ अवसरपर मैं मदीय श्रील गुरुपादपद्म तथा श्रील महाराजजीके श्रीचरणकमलोंमें दण्डवत् प्रणति पूर्वक उनकी कृपाकी याचना करता हूँ, जिससे मैं उनका पदानुसरण करते हुए उन्हींकी मनोऽभीष्ट सेवा अर्थात् उक्त महामूल्यवान् भजन-सम्पदके आचार एवं प्रचारको अधिकसे अधिक विस्तार करनेका अधिकार प्राप्त कर सकूँ।

श्रीहरि-गुरु-वैष्णव कृपालेश-प्रार्थी
श्रीभक्तिवेदान्त नारायण

वैष्णव-व्रतोत्सव तालिका

पौष कृ. ४	**२५ दिसम्बर शनि.**	**जगद्गुरु ॐ विष्णुपाद १०८ श्रीश्रीमद् भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी ठाक**
पौष कृ. ९	**२९ दिसम्बर बुध.**	**श्रीगौड़ीय वेदान्त समिति ट्रष्टक समितिक श्रीश्रीमद्भक्तिवेदान्त वामन गोस्वामी महाराजकी आविर्भाव-तिथि पूजा।**
पौष कृ. ११	**३१ दिसम्बर शुक्र.**	**सफला एकादशी व्रतोपवास।** श्रीदेवानन्द पण्डितका तिरोभाव। (अगले दिन सूर्योदयक
पौष कृ. १५	४ जनवरी मंगल.	अमावस्या। आंशिक सूर्यग्रहण। उत्तर-पश्चिम भारतमें दृश्य। स्पर्श अपराह्न २-३८, मोक्ष अपराह्न ४-१८। (विभिन्न स्थानोंके लिए ग्रहणकी समयसीमामें भेद रहेगा।)
पौष शु. ३	७ जनवरी शुक्र.	श्रील जीव गोस्वामीपादका तिरोभाव।
पौष शु. १०	**१५ जनवरी शनि.**	**मकर संक्रान्ति, गंगासागर स्नान।**
पौष शु. ११	**१६ जनवरी रवि.**	**पुत्रदा एकादशी व्रतोपवास।** (अगले दिन सूर्योदयके बाद ९-५० से पहले पारण।)
पौष शु. ३०	१९ जनवरी बुध.	पूर्णिमा।

ऊर्जा (कार्तिक) व्रत और श्रीव्रजमण्डल परिक्रमा

इस वर्ष **परमाराध्यतम श्रील गुरुदेव ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजी**की अध्यक्षतामें तथा श्रीपाद भक्तिवेदान्त तीर्थ महाराज, श्रीपाद भक्तिवेदान्त माधव महाराज, श्रीपाद भक्तिवेदान्त वन महाराज, श्रीपाद भक्तिवेदान्त श्रीधर महाराज, श्रीपाद भक्तिवेदान्त पद्मनाभ महाराज, श्रीपाद भक्तिवेदान्त दामोदर महाराज एवं अन्यान्य संन्यासियोंके संचालनमें **२२ अक्टूबरसे २१ नवम्बर तक** ऊर्जा व्रत या कार्तिक व्रत मनाया गया तथा व्रज ८४ कोसकी परिक्रमा की गयी।

विशेषतः श्रील गुरुदेवने अपनी अस्वस्थ लीला प्रकाश करने हेतु पिछले वर्षोंकी भाँति इस वर्ष श्रीवृन्दावनमें रहकर परिक्रमा कर रहे परिक्रमा पार्टीके साथ साक्षात् रूपसे उपस्थित नहीं हो सकनेके कारण अपने भक्तोंको जिस प्रकार एक ओर विरह समुद्रमें निमज्जित किया, वहीं दूसरी ओर श्रीगोवर्धनमें रहकर परिक्रमा कर रहे परिक्रमा पार्टीको अपना साक्षात् दर्शन आदि देकर आनन्द समुद्रमें उन्मज्जित किया। अपनी इस लीलासे मानो श्रील गुरुदेव विरह तथा मिलन रूपी दो पहलुओंसे युक्त प्रेमकी परिपाटीकी शिक्षा साक्षात् प्रदान कर रहें हों! आखिर श्रील गरुदेवकी इन अप्राकृत लीलाओंके गूढ़ रहस्योंका कौन पार पा सकता है?

श्रील गुरुदेवका दर्शन तथा सेवा प्राप्त करनेकी अभिलाषासे पिछले वर्षोंकी अपेक्षा इस वर्षके व्रज ८४ कोसकी परिक्रमामें अधिक भक्तवृन्दने भाग लेकर अपने जीवनको अतिशय धन्य किया।

इस व्रज ८४ कोसकी परिक्रमामें डेढ़ हजारसे अधिक भक्तोंने श्रील गुरुदेवके आनुगत्यमें तथा श्रीगौड़ीय वेदान्त समिति ट्रस्टके संन्यासियों और ब्रह्मचारी भक्तोंके साथ व्रजके मथुरा, गोकुल, रावल, बल्देव, मधुवन, तालवन, भाण्डीरवन, वृन्दावन, बेलवन, गोवर्धन, कोसी, विहारवन, नन्दगाँव, बरसाना, बैठान, काम्यवन, यावट, डीग आदि समस्त स्थानोंमें श्रीश्रीराधाकृष्ण और उनके परिकरोंकी सभी लीलास्थलियोंका दर्शन किया तथा संन्यासियोंसे उन-उन स्थानोंकी महिमाका श्रवण किया।

इस पवित्र कार्तिक महीनेमें श्रील गुरुदेवके आनुगत्यमें तथा श्रीपाद भक्तिवेदान्त तीर्थ महाराज तथा अन्यान्य संन्यासियोंकी परिचालनामें प्रत्यह स्तव, स्तुति, आरती, हरिकथा, कीर्तन आदि भक्ति-अंगोंका नियमपूर्वक याजन किया गया। इस उपलक्ष्यमें प्रत्यह प्रातःकाल श्रीपाद भक्तिवेदान्त तीर्थ माहराजने श्रीदामोदराष्टक तथा श्रीमद्भागवतके दशम स्कन्धके ८७वें अध्यायमें वर्णित श्रुतिस्तवपर श्रील प्रबोधानन्द सरस्वतीपाद द्वारा की गयी रसमयी टीकाकी व्याख्या की। सायंकालमें विभिन्न वक्ताओंने चार सम्प्रदाय तथा गौड़ीय सम्प्रदायका वैशिष्ट्य, 'शुद्धभक्ति-योग सोसाईटि' में उल्लिखित शुद्ध-भक्तिकी विवेचना, राय रामानन्द संवाद, श्रीगिरिराज महाराजकी महिमा, श्रीराधाकुण्डकी महिमा आदि विभिन्न विषयोंपर विवेचना प्रस्तुत की।

इस पवित्र महीनेमें श्रील गुरुदेवने कृपापूर्वक सैकड़ो श्रद्धालुओंको हरिनाम एवं दीक्षा दी। (निजस्व संवाददाता)

श्रीपाद भक्तिवेदान्त तीर्थ महाराज एवं अन्यान्य संन्यासीवृन्दके अनुगत्यमें श्रीधाम वृन्दावनकी परिक्रमा कर रहे भक्तगण (ऊपर)

कालीयदह लीलाको भक्तोंके समक्ष कीर्तन करते हुए श्रीपाद भक्तिवेदान्त वन महाराज (नीचे)

परिक्रमार्थी भक्तोंको हरिकथाका परिवेषण करते हुए श्रीपाद भक्तिवेदान्त सज्जन महाराज

श्रीधाम गोकुल महावनमें स्थित चौरासी खम्भा मन्दिरके प्रांगणमें उद्दण्ड नृत्य कर रहे श्रीपाद भक्तिवेदान्त श्रीधर महाराज, श्रीउत्तमकृष्ण ब्रह्मचारी, श्रीगौरराज ब्रह्मचारी, श्रीसुदाम ब्रह्मचारी आदि

श्रीपाद भक्तिवेदान्त तीर्थ महाराज एवं अन्यान्य संन्यासियोंके साथ श्रीगिरिराज गोवर्धनकी परिक्रमा करते हुए भक्तमण्डली

चक्लेश्वरमें कीर्तनमें रत भक्तवृन्द

श्रीगिरिराजके अन्नकूट महोत्सवके लिए अपने सिरपर विभिन्न प्रकारके नैवेद्योंको ले जाते हुए भक्तगण

श्रीगिरिराजजीका अभिषेक करनेसे पहले संकल्प लेते हुए श्रीपाद भक्तिवेदान्त तीर्थ महाराज और भक्त समाज

श्रीगोवर्धन स्थित श्रीगिरिधारी गौड़ीय मठमें श्रील गुरुदेव

अत्यन्त आनन्दकी बात है कि **परमाराध्यतम श्रील गुरुदेव ॐ विष्णुपाद अष्टोत्तरशतश्री श्रीमद्भक्तिवेदान्त नारायण गोस्वामी महाराजजी** सर्वाभीष्ट प्रदाता श्रीगिरिराज महाराज तथा सर्वविघ्न-विनाशक श्रीनृसिंहदेव भगवानकी कृपा-प्रसादसे श्रीगिरिराज गोवर्धनमें अवस्थान करते हुए अपना स्वास्थ्य लाभ कर रहे हैं।

श्रील गुरुदेवने १ नवम्बर २०१० को प्रातःकाल 'गोवर्धनमें वास' करनेकी अभिलाषा प्रकट की। २ नवम्बर २०१० को उन्हें दिल्लीसे गोवर्धन लाया गया। तबसे श्रील गुरुदेव गोवर्धनमें स्थित 'श्रीगिरिधारी गौड़ीय मठ' में ही वास कर रहे हैं।

सर्वाभीष्ट प्रदाता श्रीगिरिराज महाराज तथा सर्वविघ्न-विनाशक श्रीनृसिंह भगवानसे गुरुगत प्राण सेवकोंकी यही एक प्रार्थना है कि 'श्रील गुरुदेव शीघ्रातिशीघ्र पूर्ण स्वास्थ्य लाभकर श्रीमन्महाप्रभुकी मनोऽभीष्ट वाणीका प्रचार और प्रसार पहलेसे भी अधिक विपुल रूपमें कर जगतवासियोंका कल्याण करें'।

अपनी भजन कुटिके बाहर चकोरकी भाँति अवस्थित भक्तोंका आनन्दवर्धन एवं आशीर्वाद देते हुए श्रील गुरुदेव

❀ ❀ ❀ ❀

संन्यास वेश ग्रहण

२० नवम्बर २०१०, शनिवारको नित्यलीलाप्रविष्ट श्रीश्रीमद्भक्तिप्रमोद पुरी गोस्वामी महाराजकीके तिरोभाव तिथि पर श्रीगिरिधारी गौड़ीय मठ, गोवर्धनमें श्रीकृष्णकृपा दास ब्रह्मचारीने श्रील गुरुदेवसे त्रिदण्ड संन्यास वेश ग्रहण किया तथा उसी दिन श्रीप्रद्युम्न दास ब्रह्मचारीने भी श्रील गुरुदेवसे परमहंस बाबाजी वेश ग्रहण किया।

पूर्व नाम	परिवर्तित नाम
(१) श्रीकृष्णकृपा दास ब्रह्मचारी	श्रीभक्तिवेदान्त सिद्धान्ति महाराज
(२) श्रीप्रद्युम्न दास ब्रह्मचारी	श्रीप्रद्युम्न दास बाबाजी महाराज

(निजस्व संवाददाता)